पृष्ठ-संख्या ५९ से ९४

चतुर्थ अध्याय

सा मा जि क चे त ना

- सामाजिक चेतना स्वरूप
- आधुनिक काव्य में सामाजिक चेतना
- दिनकर का सामाजिक दृष्टिकोण
- दिनकर की सामाजिक चेतना
  - वर्गभेद
  - वर्णभेद
  - नारी शोषण
  - मानवतावादी विचार

निष्कर्ष ।

चतुर्थ अध्याय

सा मा जि क चे त ना

१.सामाजिक चेतना - स्वरूप

साहित्य समाज का दर्पण होता है । साहित्य में युगीन सामाजिक परिस्थिति, सामाजिक समस्याओं का चित्रण रहता है । कवि एक सामाजिक प्राणी होने के नाते वह समाज से अलग नहीं रह सकता । साहित्य समाज तथा जीवन का अविच्छिन्न संबंध है । डॉ. नगेंद्र ने कहा है - '' साहित्य का जीवन से दोहरा संबंध है । एक क्रियारूप में , दूसरा प्रतिक्रिया रूप में । क्रियारूप में वह जीवन की अभिव्यक्ति है और प्रतिक्रिया रूप में उसका निर्माता और पोषक है । ''[१]

व्यक्ति और समाज का अन्योन्य संबंध है । एक ओर जहाँ समाज के बिना व्यक्ति की कल्पना नहीं की जा सकती, वहाँ दूसरी ओर व्यक्ति का अस्तित्व स्वीकार किए बिना समाज का अस्तित्व एवं उसकी समग्रता खंडित हो जाती है। दोनों की प्रगति या अधोगति एक दूसरे पर आधारित रहती है । व्यक्ति का उत्थान या पतन समाज के उत्थान या पतन पर आश्रित रहता है । इसलिए सामाजिक परिस्थिति का अधिक प्रभाव व्यक्ति के जीवन पर पड़ना स्वाभाविक है । युग प्रवर्तन में समाज के साथ व्यक्ति का व्यक्तित्व विकसित होकर प्रगति करता रहता है । एक ओर समाज व्यक्ति को प्रभावित करता है तो दूसरी ओर व्यक्ति समाज को प्रभावित करता है । इस प्रकार समाज और व्यक्ति में सक्रिय एवं गत्यात्मक संबंध है जिससे समाज गतिशील रहता है ।

कवि समाज का एक अविभाज्य घटक है । सामाजिक परिस्थिति का असर उसके व्यक्तित्व पर , विचारों पर होता रहता है । वह इर्दगिर्द की सामाजिक

---

१. दिनकर के काव्य में क्रांतिमत चेतना - निधी भार्गव, पृ. ६६ ।

परिस्थिति का अवलोकन करता है । सामाजिक प्रगति में बाधा डालनेवाली समस्याओं का निराकरण करने का प्रयत्न करता है । समाज की बुराइयों को नष्ट करने के लिए समाज से लड़ता है । सामाजिक अंध- कुरीतियों का खंडन करता है । सामाजिक कुरीतियों का अंत करके वर्ग-हीन, जाति-हीन नए समाज की स्थापना करना चाहता है । वह सभ्यता एवं संस्कृति में संतुलन लाने का प्रयास करता है । सामाजिक वैषम्य का सर्वनाश कर आदर्श समाज की सृष्टी करना चाहता है । कवि के इस प्रकार के समाज के प्रति विचार उसका दृष्टिकोण, उसकी सामाजिक चेतना है जो उसकी रचनाओं में प्रकट होती है ।

२. आधुनिक काव्य में सामाजिक चेतना :

आधुनिक साहित्य में सामाजिक चेतना भारतेंदु काल से व्यक्त हुई है। द्विवेदी युग में वह इतिवृत्तात्मक बन गई और छायावाद के रहस्यवाद तथा पलायनवाद में धुंधली-सी पड गई । वहीं सामाजिक चेतना नए और प्रगतिशील रूप में प्रगतिवाद में प्रकट हुई ।

छायावादी कवि कल्पना लोक में विहार कर रहे थे बाद में उनके पैर धरती पर जम गए । निराला, पंत पहले छायावादी और बाद में प्रगतिवादी बन गए । छायावादी कवि निराला ने ' दान ', ' भिक्षुक ' , ' वह तोडती पत्थर ' , ' विधवा ' इत्यादि कविताएँ लिखकर अपनी सामाजिक चेतना प्रकट की । पंत ने ' ग्राम्या ' में ग्रामीण जीवन का दु:ख दर्द चित्रित करके सामाजिक चेतना को ग्राम के प्रति सचेत किया ।

बालकृष्ण शर्मा नवीन तथा भगवतीचरण वर्मा आदि ने विनाश को, क्रांति को आमंत्रित किया और चिर -सुप्त जनता को झकझोर दिया ,सामाजिक, चेतना सशक्त रूप में नागार्जुन के काव्य में प्रकट हुई । ' युगधारा ' तथा

BARR. BAL... KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

' सतरंगी पंखोंवाली ' में कवि ने सामाजिक क्षेत्र में प्रचलित रूढ परंपराएँ, आर्थिक क्षेत्र में शोषण तथा राजनीतिक क्षेत्र में बढती हुई वैयक्तिक स्वार्थ की भावना को यथार्थ चित्रों के माध्यम से व्यक्त किया है । इस कवि ने व्यंग्य के माध्यम से सामाजिक स्थितियों को निरूपित किया है । ' प्रेम का ब्यान' में भारत की आर्थिक नियोजनाओं पर व्यंग्य किया है । केदारनाथ अग्रवाल की युग की गंगा तथा लोक और आलोक की रचनाएँ सामाजिक चेतना से अनुप्राणित हैं । इस कवि ने सामाजिक जीवन में परिव्याप्त विषमताओं और असंगतियों का अंकन किया है । रामविलास शर्मा की ' रूप तरंग ' सामाजिक चेतना संपन्न रचना है । यहाँ कवि ने वर्तमान सामाजिक जीवन की विभिन्न स्थितियों के संदर्भ में किसान, मजदूर तथा अन्य श्रमजीवी वर्ग की आहत चेतना को उपस्थित करने का प्रयास किया है । शिव मंगल सिंह सुमन की ' नवयुग के गान ' और ' प्रलय सृजन ' सामाजिक चेतना को प्रस्तुत करनेवाली कृतियाँ हैं। उनका विश्वास है कि वर्तमान जीवन में जो विषमताएँ परिव्याप्त हैं उनका एक मात्र कारण पूँजीवाद है । इस समस्या का निराकरण पूँजीवादी शक्तियों के विनाश में है । दिनकर की रचना ' कुरुक्षेत्र ' , ' रश्मिरथी' ' हुंकार ' में कवि की सामाजिक चेतना प्रखर रूप में व्यक्त हुई है । इस कवि ने किसान मजदूरों को अपने काव्य का विषय बनाया । दिनकर समाज की सुव्यवस्था , व्यक्ति की समृद्धी तथा सुख और राष्ट्र की उन्नति के लिए शोषण , दमन, विषमता, असमानता आदि का सर्वनाश चाहते हैं । मानते हैं कि यह क्रांति द्वारा ही संभव है । समाज की शांति, सुख तथा व्यवस्था को चिरस्थायी बनाने के लिए वह क्रांति को गले लगाने की बात कहता है ।

३. दिनकर का सामाजिक दृष्टिकोण :

दिनकर एक प्रगतिशील कवि हैं । प्रगतिशील कवियों ने कल्पनाशीलता सौंदर्यप्रियता, कोमलता को काव्य में अधिक स्थान नहीं दिया । जीवन के सत्य

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

रूप के चित्रण को आवश्यक माना है जिसमें कुरूपता हो स्थूलता हो । प्रगतिवादी कवियों पर मार्क्स का प्रभाव था । कार्ल मार्क्स ने यह घोषित किया । 'मनुष्य सर्वोपरि है । ' सामाजिक वैषम्य प्राकृतिक विधान नहीं वरन मनुष्य द्वारा ही बनाया हुआ है । इन विचारों से भौतिकवाद की प्रतिष्ठा होने लगी । इस प्रकार प्रगतिवाद में मार्क्स के भौतिकवादी दर्शन को स्वीकृति दी जिसका मूल लक्ष्य वर्गविहीन समाज की स्थापना था ।

प्रगतिवाद में मार्क्सवादी सिद्धांतों का व्यापक उपयोग हुआ है । वर्ग-विहीन समाज तथा सर्वहारा वर्ग के प्रति उसकी सहानुभूति रही है तथा उनके उत्थान के नारे साहित्य के माध्यम से लगाए हैं । दिनकर ने प्रगतिवाद के अनुसार सामाजिक लक्ष्य से प्रेरित साहित्य को अत्यधिक महत्त्व दिया है । दिनकर का वक्तव्य -- '' प्रगतिवाद का केवल इतना ही महत्त्व है कि उसने सामाजिक लक्ष्य से प्रेरित साहित्य को प्रोत्साहन और मान दिया तथा उन लोगों को भी मस्तक उठाकर चलने की उसने प्रेरणा दी जो अपनी रचनाओं के भीतर सामाजिक और सोद्देश्य होने के कारण शुद्ध कलावादियों, आनंदवादियों और सौंदर्य-वादियों के सामने मन ही मन अपने को इज्जतहीन समझते थे । ''[२]

दिनकर साहित्य में वैयक्तिक अनुभूतियों की अपेक्षा सार्वजनिक अनुभूतियों को अधिक महत्त्व देते हैं । रवींद्रनाथ टैगोर अपने ' साहित्य ' नामक ग्रंथ में साहित्य की इस प्रकार व्याख्या करते हैं -- सहित शब्द से साहित्य की उत्पत्ति हुई है । अतएव इस शब्द में मिलने का एक भाव दृष्टिगोचर होता है । वह केवल भाव का भाव के साथ भाषा का भाषा के साथ, ग्रंथ का ग्रंथ के साथ मिलन नहीं वरन् मनुष्य के साथ मनुष्य का, अतीत से वर्तमान का तथा दूर के

---

२. चक्रवाल - भूमिका, दिनकर , पृ. ४२ ।

साथ निकट का मिलन कैसा होता है, यह बताता है । ''[३]

इस पर से यह स्पष्ट होता है कि जिस साहित्य या काव्य में यह गुण नहीं , जिसमें लोकधर्म की छाया नहीं, वर्तमान काल के ज्वलंत प्रश्नों पर विचार नहीं, अतीत का वर्तमान से मिलन नहीं वह काव्य केवल तुकबंदी ही कहा जाएगा। इसे भली भाँति समझकर ही दिनकर ने जीवन को निकट से देखा और उसे यथार्थ रूप में प्रकट करने का प्रयास किया ।

४. <u>दिनकर की सामाजिक चेतना</u>

<u>वर्गभेद</u> - (हुंकार में)

हमारा समाज दो वर्गों में बँट गया है । एक उच्च वर्ग और दूसरा निम्न वर्ग । एक महल में रहता है और दूसरा झोंपड़ी में । एक के घर में कुत्तों को भी दूध मिलता है और दूसरे की झोंपड़ी में बच्चे दूध के लिए तरसते रहते हैं। इस अमीरी और गरीबी के दरम्यान की दीवार को नष्ट करके कवि समानता लाना चाहते हैं । आर्थिक शोषण के प्रसंग में दिनकर की सामाजिक चेतना विपथगा में इस प्रकार व्यक्त हुई है ।

> ''श्वानों को मिलते दूध वस्त्र, भूखे बालक आकुलाते हैं
> माँ की हड्डी से चिपक, ठिठुर जाड़ों की रात बिताते हैं । ''[४]

सावित्रि सिन्हा ने कहा है -- '' दिनकर ने समाज को, देश को, युग को कल्पना के रंगीन चश्मे के बदले यथार्थ के नग्न नेत्रों से देखा है । ''[५] उन्होंने

---

३. कवि दिनकर और रश्मिरथी - श्री तेजनारायण टंडन, पृ.२४ ।

४. हुंकार - विपथगा - दिनकर, पृ. ७३ ।

५. दिनकर - संपादक - सावित्रि सिन्हा, लेख - हुंकार, विश्वनाथ सिंह, पृ.४९ ।

दूध दूध की रट लगाते हुए अबोध शिशुओं को श्वानों से भी गईबीती दशा में मरते देखा है । निर्बल को लांछित, अपमानित पददलित होकर निर्लज्जता से जीते हुए देखा है ।ब्याज चुकाने के लिए नारी की लाज , उसकी चिरसंचित निधि लूटते देखी है । अत्याचार के विरोधियों को बेजबान होकर तिल-तिल कर प्राण विसर्जन करते देखा है । उन्होंने यह सब खुली आँखों से देखा है । उसे देखकर वह चुप नहीं बैठते । उनका खून खोल उठता है ।

प्रगतिवादी कवि दिनकर ने किसान, मजूदर वर्ग को अपने काव्य का विषय बनाया । यह किसानों का देश होने पर भी यहाँ का किसान अत्यंत दीन-हीन बन गया है । यह वर्ग भारतीय समाज का सबसे अधिक शोषित एवं पीड़ित वर्ग था । कवि दिनकर से किसानों की ऐसी दुर्दशा देखी नहीं गई । रात दिन खून - पसीना एक करके जब किसान फसल निर्माण करता है । एक एक कौड़ी अपने लिए बचाकर रखता है । इतने में साहूकार आकर उसके मुँह की रोटी छीन लेता है । इस दुर्दशा को देखकर कवि सहम उठता है । अपने हृदय की करुणा वह ' बनफूलों की ओर ' कविता में इस प्रकार व्यक्त करता है ।

'' मरण-शोधन के लिए दूध घी बेचबेच धन जोड़ेंगे ।
बूँद- बूँद बेचेंगे अपने लिए नहीं कुछ छोड़ेंगे ।
इतने पर भी धन पतियों की उनपर होगी मार,[६]
तब मैं बरसूँगी बन बेबस के आँसू सुकुमार । ''

भारतीयता दिनकर के संस्कारों में व्याप्त है । कवि-कल्पना जगमगानेवाले महानगरों में न भटक कर उपेक्षित गाँवों में जाती है । वहाँ के प्रेममय जीवन की

---

६. हुंकार - दिनकर (बनफूलों की ओर) पृ.३४ ।

सहचरी बनना चाहती है । परंतु वहाँ की दरिद्रता को देखकर कवि आँखें बंद कर लेता है । उससे सबकुछ देखा नहीं जाता ।

'' अर्धनग्न दंपति के गृह में मैं झोंका बन जाऊँगी । ७
लज्जित हो न अतिथि - सम्मुख वे, दीपक तुरंत बुझाऊँगी।''

अथक परिश्रम करनेवाले किसानों की अभावग्रस्त जीवन दशा को देखकर कवि को उस पर तरस आता है । निरंतर परिश्रम करनेवाले किसानों की दुर्दशा को वाणी देते हुए कवि ने ' हाहाकार ' में कहा है --

'' जेठ हो कि हो पूस, हमारे कृषकों को आराम नहीं
वसन कहाँ सूखी रोटी भी मिलती दोनों शाम नहीं है ।
बैलों के ये बंधु वर्षभर क्या जाने कैसे जीते हैं ?
जबाँबंद, बहती न आँख गम खा शायद आँसू पीते हैं। ''[८]

अलस वासंती, चाँदनी और मंद मंद पुरवैया के मदहोश भरे वातावरण में कवि अपनी कल्पना के साथ विहार कर रहा ह था। प्रकृति के अणु-रेणु में छुपे हुए सौंदर्य में कवि खो गया था । कल्पना के कानन में विहार करनेवाले कवि जब धरती का हाहाकार सुना तब उसे होश आया । आकाश में विहार करने वाले पैर धरती पर उतर गए ।

'' रह रह पंखहीन खग सा मैं गिर पड़ता भू की हलचल में
झटिका एक बहा ले जाति स्वप्न राज्य आँसू के जाल में । ''[९]

---

७. हुंकार - वनफूलों की ओर
८. वही, हाहाकार , दिनकर , पृ. ३५ ।
९. हुंकार - हाहाकार , दिनकर , पृ.३४ ।

' कल्पना की दिशा ' में कवि स्वर्ग की अप्सराओं के पीछे बहकनेवाले मन को वास्तविकता की ओर लगाना चाहते हैं । इसमें कवि फूलों के पूर्वजन्म का इतिहास कहते हुए क्रमश. शृंगार से वीर और करुण की ओर बढा है ।

उसी प्रकार ' वसंत के नाम पर ' कवि ज्यों ही सौंदर्य के गीत गुनगुनाता चाहता है, जीवन का पतझाड उसका ध्यान अपनी ओर खींच लेता है और हृदय में एक कसक उठती है ।

असमय आव्हान में कवि सौंदर्य और प्रेम की ओर अभिमुख होता है । पर एक प्रबल शक्ति उसे बडे वग से अपनी ओर खींचती है । उनका आव्हान बडा ही असमय होता है । थोडी देर तक कवि गहरे असमंजस में पड जाता है । पर शीघ्र ही प्रकृतिस्थ होकर भैरव हुंकार कर उठता है । ग्रामीण चित्रण में कवि की सामाजिक चेतना यथार्थ दृष्टि रखती है । एक ओर ग्राम के प्राकृतिक सौंदर्य का चित्रण किया और दूसरी ओर उसकी कुरूपता , दैन्य, दरिद्रता, रूढिग्रस्तता का चित्रण किया है ।

<u>वर्गभेद</u> (कुरुक्षेत्र में)

दिनकर प्रगतिशील कवि हैं । उन्होंने वर्गविषमता को नष्ट करके साम्यवाद स्थापन करने की आकांक्षा की है । जब तक सब को समान रूप से रहने का अधिकार नहीं मिलेगा तब तक वर्गविषमता बनी रहेगी । और जब तक वर्गविषमता होगी तब तक समाज का विकास नहीं होगा । कुरुक्षेत्र में दिनकर की सामाजिक चेतना साम्यवादी विचारों को स्पष्ट करती है । प्रगतिवादी कवियों पर साम्यवाद का प्रभाव था । इन कवियों ने अवास्तविकता को त्याग कर वास्तविक जन जीवन को अपनाया । जगत और जीवन की ओर उसने अपना ध्यान केंद्रित किया । वर्गसंघर्ष तथा क्रांति की ज्वाला से अपने साहित्य का निर्माण किया ।

पूँजीपतियों की उसने काव्यात्मक ढंग से आलोचना की , तानाशाही के विरुद्ध क्रांति गीत गाए तथा जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रयत्न में उसने राग आलापा ।

कुरुक्षेत्र की सामाजिक चेतना में अप्रत्यक्ष रूप में मार्क्सवादी धारा के दर्शन होते हैं । वर्ग संघर्ष तथा आर्थिक विषमता को मिटाने के लिए हिंसा केवल आवश्यक नहीं, अनिवार्य है इस प्रकार दिनकर का स्पष्ट मत है । कुरुक्षेत्र में प्रकट हुई सामाजिक चेतना से यह ज्ञात होता है कि कवि वर्तमान सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था से असंतुष्ट है । वह उसका अंत चाहता है । कवि समानता, समन्वयवादिता तथा मानव हित का पुजारी है । कवि प्राचीनता को मिटाकर आधुनिकता की स्थापना करना चाहते हैं । वह समाज में व्याप्त अन्याय अत्याचार के प्रति उच्च स्वर में विरोध प्रकट करता है ।

भीष्म के द्वारा कवि अपने साम्यवादी दृष्टिकोण को प्रकट करते हैं । गांधी जी के अहिंसा तत्त्व का खंडन करके युद्ध की अनिवार्यता को स्पष्ट करते हैं । साम्यवादी सिद्धांतों के अनुसार क्रांति का समर्थन करते हैं । अत्याचारियों के दमन के लिए, शोषकों के विनाश के लिए पददलितों के उद्धार के लिए खोये हुए अधिकारों को प्राप्त करने के लिए कवि क्रांति का आवाहन करते हैं । उसी तरह समाज की शांति, सुख तथा व्यवस्था को चिरस्थायी बनाने के लिए कवि क्रांति को गले लगाने के लिए कहते हैं ।

समाज में व्याप्त वर्गविषमता को कवि क्रांति के द्वारा नष्ट करना चाहते हैं । वर्ग विषमता समाज को एक घुन की तरह लगी हुई है जो उसे अंदर से खोखला बनाती जा रही है । यह वर्गभेद ही संघर्ष का मूल कारण है --

'' वट की विशालता के नीचे जो अनेक वृक्ष,
ठिठुर रहे हैं, उन्हें फैलने का कर दो ।
रस सोखता है जो यहीं का भीमकाय वृक्ष,
उसकी शिराएं तोडो डालियाँ कतर दो । ''[१०]

कुरुक्षेत्र के तृतीय सर्ग में साम्यवादी सामाजिक चेतना विशेष रूप से प्रकट हुई है । शोषित वर्ग अत्याचार सहता है लेकिन उसकी भी एक हद होती है जब वह हद से बाहर होता है तब शोषित सिर उठाता है और युद्ध होता है । कवि ने वर्गविषमता की समस्या को उठाकर उसका हल साम्यवाद की स्थापना में बताया है । कवि के अनुसार जब तक साम्यवाद का प्रचार न होगा तब तक वास्तविक शांति संभव नहीं है ।

'' जब तक मनुज मनुज का यह सुखभाग नहीं सम होगा ।
शमित न होगा कोलाहल संघर्ष नहीं कम होगा । ''[११]

भीष्म के द्वारा कवि कहते हैं पूँजीपति छल और बल से ऐश्वर्य को प्राप्त कर लेते हैं । भूखे के मुँह से कौर छीनकर लेने में ही उन्हें आसुरी आनंद मिलता है। ऊपरी तौर पर शांति का प्रचार करते हैं । सब कुछ जनता के लिए और जनता की खातिर ही किया जा रहा है । इस प्रकार का आभास निर्माण करते हैं । लेकिन असल में गरीबों की मेहनत का पैसा लेकर अपने खजाने भरते रहते हैं। ऊपर से उस गरीब जनता को शांत रहने का उपदेश देते हैं । इस प्रकार जोर-जबरदस्ती से स्थापित की हुई शांति ' धर्म- शांति ' नहीं होती । ऐसे ढोंगी लोग युद्ध और क्रांति इसलिए नहीं चाहते कि उनका ऐश्वर्य कहीं लुट न जाए । इस प्रकार मुँह में राम और बगल में छुरी रखनेवाले लोग ही शांति-शांति चिल्लाते रहते हैं ।

---

१०. कुरुक्षेत्र - दिनकर, पृ. ८७ ।
११. वही, पृ. ८७ ।

'' अहंकार के साथ घृणा का
जहाँ द्वन्द्व हो जारी,
ऊपर शांति तलातल में
हो छिटक रही चिनगारी । ''[१२]

यहीं पर क्रांति की चिनगारी छिटकती है और कवि को विश्वास है कि वह एक न एक दिन उस पूँजीपति के भस्मासुर को भस्म कर देगी । जहाँ सुख भोगने का अधिकार सभी को समान रूप से न हो । जहाँ न्याय और नीति नहीं । जहाँ के निर्बल लोगों को केवल शक्ति के बल पर दबाया जाता है । वहाँ शांति संभव कैसे हो सकती है ? जहाँ सुख का विभाजन नहीं है, जहाँ शोषित और शोषक दो वर्ग हैं जहाँ समाज के सूत्रधारी ही अविचारी हो वहाँ शांति कैसे रह सकती है ? जहाँ समान वितरण नहीं जहाँ दमन नीति पर शांति कायम रखी जाए वहाँ की प्रजा को क्या सुख होगा - सच्ची शांति कवि के अनुसार तब निर्माण होगी जब सब को समान अधिकार मिलेगा ।

'' शांति नहीं तब तक जब तक
सुख भाग न नर का सम हो,
नहीं किसी को बहुत अधिक हो
नहीं किसी को कम हो । ''[१३]

सच्ची शांति साम्यवाद से ही प्रस्थापित होगी । न किसी को इतना अधिक मिले कि कुछ को कुछ न मिले और न किसी को इतना कम मिले कि उसको असंतोष हो । जब तक गरीबों के कंधों पर अमीरों का वैभव खड़ा रहेगा तब तक सच्ची शांति संभव नहीं ।

---

१२. कुरुक्षेत्र - दिनकर, पृ.२३ ।

१३. कुरुक्षेत्र - दिनकर , च. संस्करण , पृ.२२ ।

" धर्मराज यह भूमि किसी की
नहीं क्रीत है दासी,
है जन्मना समान परस्पर
इसके सभी निवासी । "
है सब को अधिकार मृत्ति का ।
पोषक-रस पीने का ,
विविध अभावों से अशंक हो
कर जग में जीने का । "[१४]

यह भूमि किसी की बिकी हुई दासी के समान नहीं है । सबका इस पर समान अधिकार है । सबको अधिकार है कि वे प्रकृति द्वारा प्राप्त सब वस्तुओं को समान रूप से भोगे । सब को जीवन की प्रमुख आवश्यकताओं की प्राप्ति हो। इसके लिए कवि ने दो उपाय उपस्थित किए हैं । निर्बल को सबल बनाना चाहिए। या तो सिंह के दांतों को तोड दो या बकरी के बच्चे को शेर बनाओ । अंत में कवि कामना करता है कि संसार में अधिकारों का समान वितरण हो । सभी लोग मिलकर काम करें । मनुष्य सब मनुष्यों की सुख और सुविधा का ध्यान रखे।

वर्णभेद :

वर्गभेद की तरह ' वर्णभेद ' भी समाज के लिए घातक है । वर्णभेद एकात्मता को नष्ट करता है । सभी एक ही आसमान तले रहते हैं । एक ही धरती की गोद में पलते हैं । एक ही सूरज से प्रकाश पाते हैं । प्रकृति जब मनुष्य मनुष्य में भेदभाव नहीं रखती तब मनुष्य ही आपस में भेदभाव क्यों रखता है ? यह जो हीन प्रवृत्ति मनुष्य में पनप रही है उसका कारण हमारी वह समाज रचना है जो वर्णव्यवस्था पर खडी हुई है । भारतीय वर्ण व्यवस्था ही जातीयता फैलाने की

---

१४. कुरुक्षेत्र- दिनकर, च. संस्करण, पृ. १०२ ।

जड है । इस जड को उखाड कर फेंकना है । वर्णव्यवस्था के अनुसार मनुष्य की जात कर्म से नहीं जन्म से पहचानी जाती थी । इसी वजह से समाज में ऊँच-नीच का भेदभाव फैल गया । मनुष्य जिस जाति में जन्म लेता है उसीके निर्धारित सामाजिक घटकों पर वह चलता चला जाता है । यदि वह उसके अनुसार न चला तो रूढियाँ उसे मसल देती हैं । इस प्रकार जाति और वर्ण के आधार पर उपेक्षित जातियाँ अत्याचारों को सहते - सहते थक जाती हैं और एक दिन बगावत कर उठती है । अपने अधिकारों की माँग करती हैं ।

'' हब्शी पढे पाठ संस्कृति के
खडे गोलियों की छाया में
यही शांति, वे मौन रहे
जब आग लगे उसकी काया में
चूस रहे हो दनुज रक्त भर
हो मात दलित प्रबुद्ध कुमारी ।
हो न कहीं प्रतिकार आपका
शांति की यह युद्ध कुमारी । ''[१५]

उच्च वर्ग एक तरफ शांति की दुहाई देता है तो दूसरी ओर रक्त-पिपासु बनकर उभरता है । ऐसे समय निम्न वर्ग क्रांति का सहारा लेता है । ' तकदीर का बँटवारा ' में कवि समाज में व्याप्त जातिभेद ही देश का बँटवारा करने पर तुले हुए हैं यह बात निडरता से कही है । भारत माता के दो पुत्र हिंदू और मुसलमान एक दूसरे की जान लेने पर तुले हुए हैं । माँ की ममता का कभी बँटवारा नहीं किया जाता । कवि मन की पीडा को इस प्रकार व्यक्त करता है --

---

१५. हुंकार - दिनकर , पृ. २१ ।

'' बेबसी में काँप कर रोया हृदय ,
शाप-सी आहें गरम आईं मुझे,
माफ करना जन्म लेकर —— मैं
हिंद की मिट्टी , शरम आई मुझे । ''[१६]

भारत के विभाजन से कवि के हृदय को जबरदस्त आघात पहुँचा तब उन्होंने अपने अधिक हृदय को तकदीर का बँटवारा में अत्यंत उद्विग्नता के साथ प्रकट किया है --

'' ताव था किसकी कि बाँधे कौम को,
एक होकर हम कहीं मुख बोलते ।
बोलना आता कहीं तकदीर को
हिंदवाले आसमाँ पर बोलते ।
खूं बहाया जा रहा इन्सान का
सींगवाले जानवर के प्यार में ,
कौन-सी तकदीर फोडी जा रही
मस्जिदों की ईंट की दीवार में । ''[१७]

इस प्रकार हुंकार में वर्णभेद के विरुद्ध दिनकर की सामाजिक चेतना व्यक्त हुई है । आज मनुष्य सभ्यता के शिखर पर पहुँच गया तो यह अनीति क्यों-कर रहा है ? डॉ. ब्रजमोहन शर्मा ने कहा है -- '' जातीय असमानता भारतीय भावात्मक अखंडता को खंडित करने के लिए बहुत सीमा तक उत्तरदायी रही है।''[१८]

डॉ. त्रिलोकी नारायण दीक्षित ने कहा जाति , कुल वर्ण और वर्ग के दृष्टिकोण से जो जितना निम्न है वह उतना ही अधिक शोषित है । [१९]

-----

१६. हुंकार - दिनकर, पृ. ७० ।
१७. वही, दिनकर - तकदीर का बँटवारा ।
१८. कनुप्रिया तथा अन्य कृतियाँ - डॉ. ब्रजमोहन शर्मा, पृ.१४ ।
१९. प्रेमचंद - डॉ. त्रिलोकीनारायण दीक्षित, पृ. ४९ ।

दिनकर के मतानुसार जो समाज रचना वर्णव्यवस्था पर आधारित है उसे बदल देना चाहिए ।

वर्णभेद (रेणुका में)

जातीयता को नष्ट करने के लिए भारतेंदु काल से साहित्य में विभिन्न सामाजिक चेतना प्रकट हुई । भारतेंदु ने अस्पृश्यता के उन्मूलन पर अधिक बल दिया था । इसी चेतना को दिनकर ने अपने काव्य में प्रकट किया है । 'रेणुका' की ' बोधिसत्व ' कविता अछूतोद्धार आंदोलन की प्रेरणा से लिखी है । सभी एक ही परमात्मा के बनाए हुए हैं । उसकी बनाई हुई इस दुनिया में सब एक समान होने पर भी गरीबों, अस्पृश्यों को उसकी पूजा तक करने का अधिकार नहीं मिलता । सब का रखवाला सिर्फ अमीरों का बन गया है । गुलाब जल में गरीबों के आँसु उसे दिखाई नहीं देते । अस्पृश्यों के लिए मंदिर का दरवाजा बंद रहता है । अनन्य भक्तिभावना का यहाँ कोई मोल नहीं है। शबरी के झूठे बेर से आज राम को प्रेम नहीं । इस तरह भारत में मानवता अस्पृश्य हो गई है --

> '' धन-पिशाच की विजय, धर्म की पावन ज्योति अदृश्य हुई
> दौड़ो -बोधिसत्व ! भारत में मानवता अस्पृश्य हुई । ''[२०]

दिनकर ने गांधी की अहिंसा का खंडन किया है । किंतु अछूतोद्धार नीति को अपनाया है । ' वैष्णव जन तो तेणे कहियो पीर परायी जाने रे ' का गहरा असर दिनकर पर हो गया था । उन्होंने ब्राह्मणवर्ग की अनीति के विरुद्ध भी क्रांति का उद्घोष किया है ।

---

२०. रेणुका - दिनकर , बोधिसत्व , पृ. १९ ।

'' अनाचार की तीव्र आँच में अपमानित अकुलाते हैं।
जागो बोधिसत्व। भारत के हरिजन तुम्हें बुलाते हैं,
जागो विप्लव के वाक्। दंभियों के इन अत्याचारों से,
जागो हे जागो तप-निधान। दलितों के हाहाकारों से।''[२१]

कवि ने घृणा दिलाकर मोक्ष प्राप्त करनेवाले धर्म की भर्त्सना की है। समाज की कुव्यवस्था पर पैना व्यंग्य करके प्रगतिशील सामाजिक चेतना को स्पष्ट किया है। प्रगतिवादी कवि धार्मिक रूढियों, रीतिरिवाजों से सख्त नफरत करता है। धर्म ही समाज की अधोगति का कारण बन गया है। आज-कल पैसा ही धर्म है, वही ईश्वर है।

'' पर गुलाब जल में गरीब के
अश्रु राम क्या पाएँगे ?
बिना नहाये इस जल में क्या
नारायण कहलाएँगे ?
मनुज मेघ के पोषक दानव
आज निर्द्वन्द्व हुए ?
कैसे बचे दीन, प्रभु भी धनियों
के गृह में बंद हुए ?[२२]

वर्णभेद (रश्मिरथी में)

जिस प्रकार कबीर ने कहा है -- '' जाति न पूछो साधू की पूछ लीजिए ज्ञान, मोल करो तलवार का पडी रहन दो म्यान। '' रश्मिरथी पद्य में दिनकर का यही संकेत है। कर्ण के महान गुणों का चित्रण करते हुए कवि ने

---

२१. रेणुका - (बोधिसत्व) दिनकर , पृ.१८ ।
२२. वही, पृ.१८ ।

बताया है कि हमें कर्ण के महान गुणों का ही आदर करना चाहिए । उसकी जाति-पाँति के पचडे में न पडना चाहिए । मनुष्य का आदर उसके गुणों से होना चाहिए । जिस प्रकार से किसी भी डाली पर खिला हुआ पुष्प अपनी सुंदरतादि गुणों से वंदनीय है उसी प्रकार किसी भी वंश में उत्पन्न पुरुष अपने गुणों के कारण सम्मान योग्य है ।

भारतीय वर्णव्यवस्था कर्म पर आधारित न रहकर जन्म पर आधारित है। लेकिन कवि कर्म से मनुष्य की जाति निश्चित करके अपनी प्रगतिशील सामाजिक चेतना का परिचय देते हैं । कवि के अनुसार सच्चा ज्ञानी, सच्चा ब्राह्मण , सच्चा क्षत्रिय इस प्रकार है --

'' ऊँच- नीच का भेद न माने, वही श्रेष्ठ ज्ञानी है,
दया- धर्म जिसमें हो, सबसे वही पूज्य प्राणी है ।
क्षत्रिय वही, भरी हो जिसमें निर्भयता की आग ,
सब से श्रेष्ठ वही ब्राह्मण है हो जिसमें तप-त्याग।''[२३]

इस प्रकार की अपनी सामाजिक चेतना व्यक्त करके कवि ने एक नई सामाजिक क्रांति लाने का प्रयास किया है ।

कवि के अनुसार कार्य से मनुष्य ऊँची जाति का या निम्न जाति का ठहराया जाता है । द्रोणाचार्य अपनी विद्या सिर्फ ब्राह्मणों को और क्षत्रियों को देते थे । ' एकलव्य ' को धनुर्विद्या सिखाने से उन्होंने इसलिए इन्कार किया कि वह निम्न जाति का था । एकलव्य की प्रतिभा स्वयंभू थी । उसकी धनुर्विद्या का चमत्कार देखकर द्रोणाचार्य भी अवाक् रह गए । उसने अपने आप को द्रोणाचार्य का शिष्य बताया । तब द्रोणाचार्य के मन में स्वार्थ निर्माण हुआ ।

---

२३. रश्मिरथी - दिनकर , द्वि. संस्करण, पृ.१ ।

उन्होंने छल से एकलव्य से अंगूठा माँगा । एकलव्य ने भक्तिभाव से अपना अंगूठा गुरु के चरणों में रख दिया । यहाँ पर कार्य से गुरु होते हुए भी द्रोणाचार्य निम्न जाति के थे और शिष्य होकर भी एकलव्य उच्च जाति का था ।

कर्ण के माध्यम से कवि ने कहा है --

'' मस्तक ऊँचा किए जाति का नाम लिए चलते हो,
मगर असल में शोषण के सुख से पलते हो ,
अधम जातियों से थर - थर काँपते तुम्हारे प्राण
छल से माँग लिया करते हो अंगूठे का दान । ''[२४]

स्वयं कर्ण जाति से हीन था, एक सूतपुत्र था , लेकिन उसका शौर्य, उसकी दानशीलता इतनी महान थी कि स्वर्ग के राजा इंद्र को कवच कुंडल की भीख माँगने के लिए धरती पर आना पड़ा । कर्ण ने कवच कुंडल दिए । वह हार कर भी जीत गया और इंद्र जीत कर भी हार गया ।

'' धन्य हमारा सुयश आपको खींच मही पर लाया,
स्वर्ग भीख माँगने आज , सच ही मिट्टी पर आया । ''[२५]

ऐसे महान दानी कर्ण को जाति के लिए हर जगह अपमानित होना पड़ा । परशुराम अपनी विद्या सिर्फ ब्राह्मणों को ही देते थे । कर्ण ने अपने आपको क्षत्रिय होने पर भी ब्राह्मण बताकर विद्या सीख ली । जब सच्चाई प्रकट हुई तब उसके गुरु ने उसे शाप दिया । पग- पग पर उसकी जाति उसका उपहास कर रही थी ।

---

२४. रश्मिरथी - दिनकर, द्वि. संस्करण, पृ. ४।
२५. वही, पृ. ६२ ।

भरी सभा में उसने अर्जुन को द्वंद्व युद्ध के लिए ललकारा । तब कृपाचार्य ने कहा अर्जुन राजपुत्र है, क्षत्रिय है । एक राजपुत्र दूसरे राजपुत्र से ही युद्ध कर सकता है । अर्जुन से लड़ना हो तो पहले तुम किस जाति के हो यह बताया । तब कर्ण जोश में आकर कहता है । --

'' जाति ! हाय री जाति ! कर्ण का हृदय क्षोभ से डोला,
कुपित सूर्य की ओर देख वह वीर क्रोध से बोला ।
जाति- जाति रटते जिनकी पूँजी केवल पाखंड,
मैं क्या जानूं जाति ? जाति है ये मेरे भुजदंड । ''[२६]

दिनकर ने जातीयता का ~~ढ़~~ स्तोम मचानेवालों को फटकारा । जो लोग छुआ-छूत का भेदभाव रखते हैं, वे लोग कायर होते हैं ।

'' मूल जानना बड़ा कठिन है, नदियों का वीरों का,
धनुष्य छोड़कर और गोत्र क्या होता रणधीरों का ?
पाते हैं सम्मान तपोबल से भूतल पर शूर
जाति- जाति का शोर मचाते केवल कायर , क्रूर । ''[२७]

हमारे समाज में यह रूढ मान्यता है कि बड़े वंश का व्यक्ति बड़ा होता है । कवि दुर्योधन के द्वारा इसका खंडन करके अपनी सामाजिक चेतना व्यक्त करते हैं । जाति के कलंक को मिटाने के लिए जब कर्ण को अंगदेश का राजा घोषित किया जाता है तब भीम कुत्सित भाव से सवाल करता है - सूतपुत्र कैसे राज्य चलाएगा ? यह सुनकर दुर्योधन गरज पड़ता है --

---

२६. रश्मिरथी - दिनकर , द्वि. संस्करण, पृ.४ ।
२७. वही, दिनकर, पृ. ५ ।

'' बड़े वंश से क्या होता है, खोटे हो यदि काम ? [२८]
नर का गुण उज्ज्वल चरित्र है, नहीं वंश-धन धाम । ''

कवि ने सामाजिक रूढियों पर प्रहार किए और इस दलदल से समाज को बाहर लाने के लिए कर्ण जैसे एक महान व्यक्तित्व की कामना की । डॉ. यतींद्र ने कहा है -- '' रश्मिरथी दिनकर जी की महनीय कृति है, जिसमें परिवर्तन-शील जगत के समक्ष हमें रूढिवादिता एवं वर्णभेद तथा जातिभेद आदि को त्यागकर सच्चे मानवीय गुणों को अपनाने की शिक्षा दी गई है । ''[२९]

' रश्मिरथी ' में कर्ण कवि के आदर्शों का प्रतीक है । कर्ण का व्यक्तित्व जात- पाँत के बंधनों से ऊपर उठा हुआ था । कर्ण का आदर्श उपस्थित करके कवि ने संदेश दिया है कि व्यक्ति अपने कर्तृत्व के बल पर कुल के, जाति के कलंक को मिटा सकता है । निम्न जाति के उद्धार के लिए कोई एक महात्मा फुले बनकर तो कोई एक बाबासाहेब आंबेडकर बन कर आता है, जो निम्न लोगों का सहारा बन जाता है । कर्ण कहता है --

'' मैं उनका आदर्श, जिन्हें कुल का गौरव ताडेगा ,
नीच वंशजन्मा कहकर जिनको जग धिक्कारेगा ।
जो समाज की विषम वह्नि में चारों ओर जलेंगे ।
पग - पग पर झेलते हुए बाधा नि:सीम चलेंगे । ''[३०]

जाति के नाम पर कलंकित हुआ कर्ण अपनी निम्न जाति के आँसू पोंछने के लिए आगे बढता है । तडपने के लिए न छोडकर एक नई राह बताता है। समाज के खिलाफ वह खडा रहता है । समाज से टक्कर देने के लिए वह कटिबद्ध है । यहीं पर दिनकर की विद्रोही सामाजिक चेतना परिलक्षित होती है ।

---

२८. रश्मिरथी - दिनकर, द्वि. सं. पृ. ७ ।
२९. दिनकर की काव्यभाषा- डॉ. यतींद्र तिवारी, पृ. ६४ ।
३०. रश्मिरथी - दिनकर पृ. ६६ ।

" जग में जो भी निर्दलित प्रताड़ित जन है ।
जो श्री विहीन है, निंदित है, निर्धन है
यह कर्ण उन्हीं का सखा बंधु सहचर है ।
विधि के विरुद्ध ही उसका रहा समर है । "[३१]

' रश्मिरथी ' के संबंध में डा. सुधांशु ने अपना मतप्रतिपादन इस प्रकार किया है । " दिनकर को अपनी आकांक्षा के अनुरूप रश्मिरथी कर्ण जैसा नायक प्राप्त हुआ जो अपनी महत्ता से न केवल हमारे मानव को आप्लावित कर लेता है, बल्कि हमारे समाज तथा साहित्य पर भी अमिट छाप डालता है ।"[३२]

नारी-शोषण :

हिंदी साहित्य के विभिन्न कालों में सामाजिक परिस्थिति के अनुसार नारी का चित्रण हुआ है । भक्तिकाल में नारी को एक देवी के रूप में चित्रित किया । रीति काल में नारी का नखशिख वर्णन हुआ उसमें मांसलता अधिक थी। उसके चित्रण में शृंगारिकता थी । लेकिन आधुनिक काल में नारी की तरफ देखने का दृष्टिकोण बदल गया । नारी देवी नहीं, वह एक उपभोग्य वस्तु नहीं, वह समाज का एक घटक है । उसे सभी अधिकार प्राप्त होने चाहिए । सदियों से सामाजिक बंधन में बंधी हुई नारी को मुक्त करने का बीड़ा प्रगतिवादी कवियों ने उठाया । दिनकर पर मैथिलीशरण का प्रभाव अधिक था । उनके राष्ट्रीय काव्य द्वारा यह प्रभाव दृष्टिगोचर होता है । नारी की तरफ देखने की दृष्टि दिनकर ने उन्हीं की अपनाई है । मैथिलीशरण ने नारी को उच्च आदर्श पर स्थित करके उसके त्यागमयी जीवन का बखान किया है उन्होंने कहा -- "अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी, आँचल में है दूध और आँखों में पानी । "[३३]

---

३१. रश्मिरथी - दिनकर , पृ.१०० ।
३२. रश्मिरथी - समीक्षा , भूमिका से उद्धृत , डॉ. सुधांशु ।
३३. यशोधरा - मैथिलीशरण गुप्त, पृ.   ।

सदियों से पुरुष जाति द्वारा नारी पर अन्याय होता आया है । लेकिन यह सब भूलकर नारी पुरुष का सहयोग देती है । उसके सहयोग से ही पुरुष प्रगतिपथ पर निरंतर अग्रसर होता रहता है । नारी उसके पथ पर फूल बिछाती है और पुरुष उसे पैरों तले रौंदता रहता है । इतना अन्याय सहने पर भी वह अश्रुपूरित नेत्रों से उसकी कल्याणकामना में लगी रहती है । ' राजा रानी' में कवि कहता है --

'' राजा वसंत, वर्षा ऋतुओं की रानी
लेकिन दोनों की कितनी भिन्न कहानी !
राजा के मुख में हँसी, कंठ में माला
रानी का अंतर विकल , दृगों में पानी । ''[३४]

प्रभु रामचंद्र ने प्रजापति के कर्तव्य को निभाने के लिए पत्नी का त्याग किया । दुष्यंत ने शकुंतला से गांधर्व विवाह करके उसका त्याग किया।

'' नृप हुए राम, तुमने विपदाएँ झेली
थी कीर्ति उन्हें प्रिय, तुम बन गईं अकेली,
रानी ! करुणा की तुम भी विषम पहेली । ''[३५]

इस प्रकार नारी जाति पर होनेवाले अन्याय को दर्शाते हुए कवि उसे समान अधिकार मिलने के लिए आवाज उठाता है । स्त्री-पुरुष समानभाव रखकर कवि अपनी प्रगतिशील सामाजिक चेतना व्यक्त करता है ।

'' भू पर रानी जूही, गुलाब राजा है,
राजा- रानी है सूर्य - सोम अंबर में । ''[३६]

---

३४. रेणुका - राजारानी - दिनकर, पृ. ४१ ।
३५. वही, पृ. ४२ ।
३६. वही, पृ. ४४ ।

हमारे इस पुरुष प्रधान समाज में हर वक्त नारी पर अन्याय होता आया है । निसर्गत: दुर्बल नारी का एक मात्र आधार उसका पति रहता है । जब वही सहारा टूट जाता है तब निराला के शब्दों में वह ' टूटे तरु की छूटी लता ' -सी बन जाती है । सामाजिक दृष्टि से विधवा जिस अमानवीय व्यवहार से पीड़ित है कवि की सहानुभूति उसके साथ है । परंपरा से चला आ रहा नारी का शोषण पुरुष की अनुदार भावना का ही प्रतीक है । ' विधवा ' में कवि ने विधवा समस्या उठाई है --

'' नव यौवन की चिता बनाकर
आशा-कलियों को स्वाहाकर
मग्न मनोरथ की समाधि पर तपस्विनी बैठी निर्जन में
जीवन के शुचि शून्य सदन में । ''[३७]

नारी शोषण (रश्मिरथी में)

एक नारी के कई रूप होते हैं । वह माता, प्रेयसी, बहन, देवी, गृहिणी सब रूपों में होती है । नारी के बिना पुरुष का जीवन अधूरा है । पुरुष सौ गुनाह करने पर भी समाज में सिर ऊँचा उठाकर जी सकता है । लेकिन नारी की एकाध भूल को समाज माफ नहीं कर सकता । तब नारी को अपने मातृत्व का भी समाज के सामने अस्वीकार करना पड़ता है । कुमारी माता समाज को स्वीकार्य नहीं है । इसलिए नारी को अपने कलेजे पर पत्थर रखकर , कलेजे के टुकड़े को त्यागना पड़ा । नारी की इस विवशता पर दिनकर ने स्वार्थी समाज के प्रति आक्रोश व्यक्त किया है और नारी के प्रति अपने कर्तव्य को निभाते हुए कवि ने सामाजिक चेतना को प्रकट किया है । समाज में नारी कितनी

---

३७. रेणुका - विधवा , दिनकर , पृ. ६५ ।

दीन-हीन है यह बात ' रश्मिरथी ' में कुंती के द्वारा दिनकर ने बताई है-

'' बेटा धरती पर बडी दीन है नारी
अबला होती सचमुच योषित कुमारी
है कठिन बंद करना समाज के मुख को,
सिर उठा न पा सकती पतिता निज सुख को । ''[३८]

लोक लाज के भय से कुंति ने कर्ण का त्याग किया पर वह अपने मातृत्व को भूल नहीं सकी । जनम भर वह पश्चाताप की आग में जलती रही ।

'' यश ओढ जगत को तो छलती आई हूँ ।
पर सदा हृदय तल में जलती आई हूँ । ''[३९]

नारी सब कुछ सहते आई है । लेकिन अब वह अपने अधिकार के प्रति सचेत हो गई है । समाज का प्रतिकार करने की शक्ति उसमें आ गई है । सामाजिक बंधनों को तोडकर वह घर की चौखट लाँघ कर बाहर आई है । अपने खोये हुए अधिकार वह प्राप्त करने के लिए डटकर खडी हो गई है ।

'' भागी थी तुझको छोड कभी जिस, भय से ,
फि र कभी न हेरा तुमको जिस संशय से
उस जड समाज के सिर पर चरण धरूँगी [४०]
डर चुकी बहुत, अब और न अधिक डरूँगी । ''

---

३८. रश्मिरथी - दिनकर , पृ. ८० ।

३९. वही, पृ. ९४ ।

४०. वही, पृ. ८० ।

नारी_शोषण (उर्वशी में)

उर्वशी के द्वितीय अंक में औशिनरी को एक आदर्श नारी के रूप में चित्रित किया है। भारतीय नारी अपने पति के साथ जीवन भर एकनिष्ठ रहती है। उसकी पूजा करती रहती है। उसके निस्सीम प्रेम को पति द्वारा ठुकराने पर भी वह पति का भला चाहती है। दूसरी स्त्री में मशगूल हुए अपने पति की याद में वह आँसू बहाती रहती है। जब औशिनरी को पता चल जाता है कि उसका पति एक अप्सरा के प्रेम में खोया हुआ है तो वह चुपचाप इस बात का स्वीकार कर लेती है।

'' हाय मरण तक जी कर मुझको हलाहल पीना है। ''[४१]

पति के द्वारा त्यागने पर भी वह अपने लिए नई राह कहीं बना पाती। उसकी पति पर इतनी निष्ठा रहती है कि वह उसके सिवा कुछ सोच ही नहीं सकती। पति की यादों में वह अपने दिन काँटने लगती है। पति के द्वारा ठुकराई जाने पर वह मौत को अपनाना चाहती है।

'' आजीवन वे साथ रहेंगे ? तो अब क्या करना है ?
जीते जी यह मरण झेलने से अच्छा मरना है। ''[४२]

लेकिन पुरुष पत्नी को खुशी से मरने भी नहीं देता और उधर उसका जीना दूभर कर देता है। जब औशिनरी अपने निराश मन की बात को प्रकट करती है तब निपुणिका कहती है --

'' मरण श्रेष्ठ है किंतु आपको वह भी सुलभ नहीं है।
जाते समय मंत्रियों से प्रभु ने यह बात कही है,
एक वर्ष पर्यंत गंधमादन पर हम विचरेंगे ,
प्रत्यागत हो नैमिषेय नामक शुभ यज्ञ करेंगे।

---

४१. उर्वशी - दिनकर , पृ.३३ ।
४२. वही, पृ. 33 ।

यज्ञ न होगा पूर्ण बिना कुलवनिता परिणीता के ।
इसी धर्म के लिए आपको भुवनेश्वरी जीना है । ''[४३]

मैथिलीशरण की यशोधरा और उर्मिला का त्याग करके उनके पति चले गए थे । लेकिन वे एक दिव्य कर्म करने की प्रेरणा से जुड़े हुए थे । इधर औशिनरी का पति उसका त्याग कर व्यक्तिगत प्रेम और वासना से प्रेरित होकर गया था । पत्नी की निष्ठा से ऊब कर नए सौंदर्य, नई अनुभूतियों की खोज में, पत्नी के प्रेम को ठुकराकर पुरुरवा चला जाता है । पत्नी का त्याग, समर्पण सेवा उसे घर के अंदर बाँधकर नहीं रख सकता । वह अपनी वासना बुझाने के लिए कहीं और चला जाता है और इधर विवश नारी उसका इंतजार करते करते पल काटने लगती है । औशिनरी का पश्चात्ताप यहाँ व्यक्त हुआ है ।

'' रही समेटे अलंकार क्यों लज्जामयी वधू-सी ?
बिखर पड़ी क्यों नहीं कुट्टमित, चकित, ललित लीला में ?
बरस गई क्यों नहीं घेर सारा अस्तित्व का
मैं प्रसन्न , उद्दाम, तरंगित, मदिर मेघमाला सी । ''[४४]

नारी का एकमात्र आधार पति रहता है । जब वह उससे मुँह मोड लेता है तो वह विवश बन जाती है । नारी हृदय की कसक कवि ने औशिनरी के शब्दों में इस प्रकार बताई है ।

'' पति के सिवा योषिता को कोई आधार नहीं,
जब तक है यह दशा, नारियाँ व्यथा कहाँ खोयेंगी ?
आँसू छिपा हँसेंगी फिर हँसते हँसते रोयेंगी । ''[४५]

---

४३. उर्वशी - दिनकर, पृ.३२ ।
४४. उर्वशी - दिनकर, पृ.१६० ।
४५. उर्वशी - दिनकर , पृ.३९ ।

दिनकर की सामाजिक चेतना के दर्शन सुकन्या में होते हैं। वह पुरुष को भलीभाँति पहचानती है। संसार की और सब समस्याओं का समाधान पुरुष के पास है परंतु अपनी ही बनाई हुई उलझनों से निकल सकने में वह असमर्थ होता है इसलिए गृहस्थ नारी का दायित्व होता कि वह सजग होकर पुरुष की आवश्यकताओं को अभावों को देखे। वह औशिनरी को बताती है --

'' और देवि ! जिन दिव्य गुणों को मानवता कहते हैं
उसके भी अत्यधिक निकट नर नहीं, मात्र नारी है।
जितना अधिक प्रभुत्व तृषा से पीड़ित पुरुष-हृदय है[४६]
उतने पीड़ित कभी नहीं रहते हैं प्राण त्रिया के। ''

वह कहती है जिसने नारी का निर्माण किया वह पुरुष था। उसने इस कौशल से उसे बनाया कि वह अपने अधिकार गँवाकर कृतार्थ हो जाती है। सुकन्या पुरुष जाति को ललकारते हुए कहती है, यदि उन्हें ऐसा अवसर मिला तो वे ऐसे पुरुष को निर्माण करेंगी जो कर्कश निनाद में करुणा की पुकार सुन लेगा।

दिनकर ने नारी की विवशता को बताकर उसके उज्ज्वल भविष्य की कामना की है -- औशिनरी जो खुद अंधियारे में डूबी हुई है पर वह आनेवाले प्रकाशवान कल का इंतजार करती है --

'' कितना मधुर स्वप्न। कैसी कल्पना चांद्र महिमा की
नारी का स्वर्णिम भविष्य, जाने वह अभी कहाँ है।
हम तो चली भोग उसको जो सुख दुख हमें बदा था,[४७]
मिले अधिक उज्ज्वल उदार युग आगे की ललना को। ''

---

४६. उर्वशी - दिनकर, पृ.१६४।

४७. वही, पृ.१६५।

इस प्रकार दिनकर ने नारी शोषण को चित्रित करके उसे उस शोषण से मुक्ति दिलाने की कामना की है । नारी के दुर्बल पक्ष को उठाकर उसे सबल बनाने का प्रयास किया है और इस प्रकार दिनकर की सामाजिक चेतना ने समाज का कोना कोना छान मारा है और समग्र समाज का चित्रण करके उसकी समस्याओं का निराकरण भी सुझाया है । दिनकर ने वर्णभेद, वर्गभेद, नारी-शोषण आदि सामाजिक प्रश्नों को उठाया है । और उन प्रश्नों का जवाब भी दिया है ।

मानवतावादी सामाजिक चेतना (कुरुक्षेत्र में)

दिनकर ने अपनी काव्य यात्रा गुप्त जी की प्रेरणा से शुरू की थी । दिनकर की सामाजिक चेतना का एक और पहलू है वह है उसका मानवतावादी होना । दिनकर ने जितनी व्यापकता के साथ क्रांति का विवेचन विश्लेषण किया है, संवेदना की , उसी तीव्रता के साथ उन्होंने मानवतावाद का भी विवेचन किया है । दिनकर की अनेक रचनाएँ सामाजिक संवेदना से ओतप्रोत हैं।

' कुरुक्षेत्र ' में कवि ने युद्ध की भयंकरता का चित्रण करते हुए उससे उत्पन्न दुष्परिणामों का चित्रण किया है । युद्ध की समस्या पर उसने गंभीरतापूर्वक मनन किया है । इस समस्या का हल उसने यह बताया है कि सभी व्यक्तिगत स्वार्थ को भूलकर सामाजिक हित की सोचें तथा मानव मात्र के कल्याण के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहे । इन्हीं विचारों में दिनकर की मानवतावादी चेतना प्रकट होती है ।

' कुरुक्षेत्र ' के प्रथम सर्ग में कवि ने युद्धजन्य हिंसा पर गहरा दु:ख व्यक्त किया है । विजय प्राप्त होने पर भी युधिष्ठिर दु:खी थे, उनका हृदय पश्चात्ताप की ज्वाला से दग्ध हुआ जा रहा था । वह सोचता है , इतना अधिक रक्तपात

हुआ है कि कुरुक्षेत्र की एक कोस भूमि में रुधिर प्रवाहित होरहा है। उनकी आत्मा कहती है कि पृथ्वी में गहराई तक सैनिकों का रुधिर समा गया है और ऊपर भी बह रहा है जिसमें मरे हाथी घोडे तथा कटे अंग तैर रहे हैं। असंख्य सैनिक मारे गए हं। मैं जिस शांति तथा आत्मिक संतोष को चाहता था वह मुझ से और दूर हो गया है। यह युद्ध सुखशांति पाने की इच्छा से किया था। इतनी मारकाट, रक्तपात और विनाश के पश्चात भी क्या सुख शांति प्राप्त हुई है।

> " किंतु इस विध्वंस के उपरांत भी
> शेष क्या है? व्यंग्य ही तो भाग्य का ?
> चाहता था प्राप्त मैं करना जिसे
> तत्त्व वह करगत हुआ या उड गया ?"[४८]

युधिष्ठिर सोचते हैं शत्रुओं का नाश करके मैं सुख शांति चाहता था पर ये चीजें मुझ से दूर हो गई हैं। अब मेरे हाथ में केवल पश्चाताप और रोना है। यदि हम पांडव राज्य के लोभ में न पड़ते, यदि हम अपने भाग्य पर संतोष करना चाहते, यदि निजी कठिनाइयों तथा असुविधाओं की चिंता हम न करते, यदि हम शांतिपूर्वक रहना पसंद करते तो यह महाभारत क्यों होता? युधिष्ठिर के ये विचार मानवतावादी हैं।युधिष्ठिर की तरह अगर हर कोई इसी प्रकार सोचेगा तो जरूर विश्वशांति स्थापित होगी इस पर कवि का विश्वास है।

द्वितिय सर्ग में युधिष्ठिर भीष्म के समक्ष भारी मन से मानवता की राह में आनेवाली बाधाओं का उल्लेख करते हैं। वे भीष्म के समक्ष एक विजेता के रूप में नहीं, बल्कि मानवता के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होते हैं।

---

४८. कुरुक्षेत्र - दिनकर, पृ. ६ ।

" जानता नहीं जो परिणाम महाभारत का,
तन-बल छोड मैं मनोबल से लडता,
तप से , सहिष्णुता से , त्याग से सुयोधन को
जीत, नई नींव इतिहास की मैं धरता । "[४९]

युधिष्ठिर भीष्म से कहते हैं महाभारत युद्ध का इतना भीषण परिणाम होगा यह मुझे पहले ही से यदि ज्ञात होता तो मैं कभी शस्त्र गृहण न करता। मैं आत्मिक शक्ति का प्रयोग करता । मैं अहिंसा , तप और त्याग से दुर्योधन के हृदय को परिवर्तित करने का प्रयत्न करता । यदि मैं उसमें सफल होता तो इतिहास को मैं एक नवीन वस्तु भेंट कर सकता वह थी अहिंसा । युद्ध तथा उससे प्राप्त विजय । युधिष्ठिर ने अपनी आस्था अहिंसा पर प्रकट की है । कवि का मानवतावादी दृष्टिकोण यहाँ प्रकट होता है ।

षष्ठ सर्ग में कवि की मानवतावादी सामाजिक चेतना प्रकट होती है । कवि विज्ञान की महत्ता का वर्णन करता है । विज्ञान द्वारा मनुष्य ने पृथ्वी पर अपना अधिकार प्रस्थापित कर लिया है । जितने पैमाने में उसकी वैज्ञानिक प्रगति हो रही है उतना उसका नैतिक अध:पतन हो रहा है । विधायक कार्य की अपेक्षा विज्ञान विध्वंसात्मक कार्य में लग गया है । यदि विज्ञान विधायक कार्यों में लग जाए, मनुष्य अपनी मानवता को विकसित करने का निश्चय कर ले, तो फिर संघर्ष , युद्ध की आवश्यकता ही नहीं रहेगी ।

" किंतु है बढता गया मस्तिष्क ही नि:शेष
छूटकर पीछे गया है रह हृदय का देश
नर मनाता नित्य नूतन बुद्धि का त्योहार [५०]
प्राण में करते दु:खी हो देवता चीत्कार । "

---

४९. कुरुक्षेत्र - दिनकर, पृ. ९ ।
५०. कुरुक्षेत्र - दिनकर , पृ. ८९ ।

भौतिक वस्तुओं पर तो मानव ने विजय पाई है पर उसकी आध्यात्मिकता नष्ट हो गई है। केवल बुद्धि का विकास ही मनुष्य के लिए उपयुक्त नहीं है, हृदय का विकास भी परम आवश्यक है। आज मनुष्य में करुणा , दया, क्षमा, बलिदान के भाव नहीं।

'' पर सको सुन तो सुनो मंगल जगत् के लोग
तुम्हे छूने को रहा जो जीव कर उद्योग
वह अभी पशु है, निरा पशु हिंस्र, रक्त पिपासु
बुद्धि उसकी दानवी है स्थूल की जिज्ञासु। ''[५१]

आज विज्ञान गर्व में चूर होकर संहार के भीषणतम अस्त्रों का आविष्कार कर रहा है। मनुष्य मनुष्य को मारने के लिए तुला हुआ है। विज्ञान का पावन उद्देश्य मानव की शांति और समृद्धि होना चाहिए पर विज्ञान निर्माण की ओर ध्यान न देकर संहार की ओर लगा हुआ है।

'' यह मनुज जो ज्ञान का आगार
यह मनुज जो सृष्टि का शृंगार
नाम सुन भूलो नहीं, सोचा विचारो कृत्य।
यह मनुज , संहार-सेवी, वासना का भृत्य।
छद्म इसकी कल्पना पाषाण्ड इसका ज्ञान
यह मनुष्य, मनुष्यता का घोरतम अपमान। ''[५२]

कवि ने अपने मानवतावादी तत्त्वों पर जोर देते हुए कहा है यदि मानव हृदयों पर राज्य कर सके, यदि वह स्वयं अपने ऊपर राज्य कर सके, तभी वह

---

५१. कुरुक्षेत्र - दिनकर, पृ. ९२।
५२. वही, पृ. ९३।

वास्तविक मनुष्य है । बुद्धि पर नहीं, हृदय पर उसका शासन हो । मनुष्य मात्र से यदि वह प्रेम कर सके, मनुष्य मनुष्य के बीच जो असमानता है, दूरी की दीवार है, यदि उसे तोड सके, तभी वह सच्चा मनुष्य होगा ।

'' जो जीव बुद्धि अधीर ...
तोड़ता अणु ही, न इस व्यवधान का प्राचीर
वह नहीं मानव, मनुज से उच्च लघु या भिन्न
चित्र-प्राणी है किसी अज्ञात गृह का छिन्न ।
स्यात्, मंगल या शनिश्चर लोक का अवदान
अजनबी करता सदा अपने गृहों का ध्यान । [५३] ''

कवि दृढता से कहता है जो मनुष्य केवल विज्ञान के रहस्यों के उद्घाटन ही में लगा रहे , जो मानवता के प्रसार में सहायक न हो, वह इस पृथ्वी का नहीं है । जो इस संसार का वास्तविक प्राणी कहलाना चाह उसे विश्व में मानवता का सृजन करना चाहिए ।

'' रसवती भू के मनुज का श्रेय
यह नहीं विज्ञान, विद्या बुद्धि का आग्नेय ,
विश्वदाहक, मृत्युवाहक, सृष्टि का संताप
भ्रांत पथ पर अंध बढते ज्ञान का अभिशाप । ''[५४]

कवि की मानवतावादी सामाजिक चेतना इन शब्दों में व्यक्त हुई है । कवि चाहता है कि मानव प्रेम से मनुष्यों का हृदय ओतप्रोत हो । मनुष्य मनुष्य के लिए अपने जीवन को न्यौछावर करना सीख जाए । वह निराश जनों की आशा बन सके और रोनेवालों का धीरज । अपने सुखों का दूसरों के सुखों के

---

५३. कुरुक्षेत्र - दिनकर , पृ. ९४ ।
५४. वही, पृ. ९४ ।

लिए बलिदान करना चाहिए । इस प्रकार कवि कामना करता है कि पृथ्वी मानव की मानवतावादी भावनाओं से सिंचित हो ।

विश्वशांति, विश्वबंधुत्व का भाव :

कवि की मानवतावादी सामाजिक चेतना में विश्वशांति और विश्वबंधुत्व का भाव मिलता है । कवि कामना करता है --

'' पृथ्वी हो साम्राज्य स्नेह का, जीवन स्निग्ध सरल हो ,
मनुज प्रकृति से विदा सदा दाहक द्वेष गरल हो ।
बहे प्रेम की धार, मनुज को वह अनवरत भिगोये ,
एक दूसरे के उर में नर बीज प्रेम के बोये । ''[५५]

कवि कहता है कितना अच्छा हो यदि पृथ्वी पर स्नेह, सरलता का साम्राज्य हो । मनुष्य स्वभाव से सदा का द्वेष , द्रोह मिट जाए । एक दूसरे से लोग अकपट प्रेम करें । अभी संसार आदर्श के मार्ग पर थोडा ही अग्रसर हुआ है ।

'' क्योंकि युधिष्ठिर एक, सुयोधन अगणित अभी यहाँ हैं
बढे शांति की लता हाय वे पोषक द्रव्य कहाँ है ? ''[५६]

अहिंसा, तप , क्षमा, दया , करुणा आदि सात्त्विक भावों को निरंतर द्वेष के शिला दुर्ग से टकराना पडता है । विश्व शांति के लिए विश्वबंधुत्व की भावना का निमित्त होना अत्यधिक आवश्यक है ।लेकिन विश्वबंधुत्व की भावना थोडे ही लोगों में है । चारों ओर घृणा, कलह व्याप्त है । एक युधिष्ठिर हैं तो हजारों दुर्योधन हैं ।

---

५५. कुरुक्षेत्र - दिनकर, पृ.३४ ।
५६. वही, पृ. ३५ ।

शांति की स्थापना के लिए प्रेम आवश्यक है। मनुष्य का मन जब निष्पाप होगा तब उसे शांति की कामना होगी। जब मनुष्य की अंतरतम भावनाएँ स्वयं शांति स्थापित करेंगी वह शांति मानव मात्र को कल्याणप्रद होगी। उसी के द्वारा विश्वशांति प्रस्थापित होगी। कोई भी राष्ट्र शंका रूपी तिमिर से ग्रस्त नहीं होगा। इसी लिए कवि कहता है --

'' गरल-द्रोह विस्फोट- हेतु का करके सफल निवारण
मनुज प्रकृति ही करती शीतल रूप शांति का धारण
जब होती अवतीर्ण शांति यह भय न शेष रह जाता, ५७
शंका तिमिर - ग्रस्त फिर कोई नहीं देश रह जाता। ''

कवि ने अनेक स्थलों पर अपने काव्यों में स्वतंत्रता, समानता तथा विश्व-बंधुत्व आदि जीवन मूल्यों की स्थापना पर बल दिया है। दिनकर सोचते हैं कि जब तक स्वतंत्रता, समानता, विश्वबंधुत्व की भावना विश्व में सर्वत्र नहीं फैलेगी तब तक सच्ची शांति स्थापित नहीं हो सकती। यह अवश्य है कि समाज को जागृति का स्वर मिल गया है। परंतु यह जागृति तब तक अधूरी रहेगी, जब तक हमें उचित अधिकार नहीं मिल पाएँगे।

कवि की विशाल, उदार मानवतावादी सामाजिक चेतना भी यहाँ व्यक्त होती है। कवि भारत के बूढ़े बच्चे - बच्चे को प्रेरणा देता है कि वह अपने देश और जाति को सबल, सुदृढ बनाने के लिए अपंगों की भी सहायता करे। इसी दृष्टि से प्रत्येक मानव को जनमानस के कल्याण में लग जाना चाहिए।

'' वह सुख, जो मिलता असंख्य मनुजों को अपना कर,
हँसकर उनके साथ हर्ष में और दु:ख में रोकर।

---

५७. कुरुक्षेत्र - दिनकर, पृ. ३६।

वह जो मिलता भुजा पंगु की ओर बढ़ा देने से,
कंधों पर दुर्बल दरिद्र का बोझ उठा लेने से । '' [५८]

कवि मानव मात्र के उज्ज्वल भविष्य की आशा करता हुआ कहता है कि परस्पर भाईचारे से जीवन व्यतीत करें और क्रोध त्याग दें । तब संसार से युद्ध का आतंक सदा सर्वदा के लिए टल सकेगा । सभी व्यक्ति एक दूसरे पर विश्वास करें तब द्वेष की आग बुझ सकेगी ।

'' मैं भी हूँ सोचता, जगत से कैसे उठे जिघांसा
किस प्रकार फैले पृथ्वी पर करुणा, प्रेम अहिंसा
जिये मनुज किस भाँति परस्पर होकर भाई-भाई
कैसे रुके प्रदाह क्रोध का कैसे रुके लड़ाई । '' [५९]

इस प्रकार दिनकर समाज और देश की स्थिति से आँखें मूँद कर कविता को कोमल रंगीन रेशमी धागों में बाँधना नहीं चाहते । वे जीवन की कटुता से भागकर नहीं उसका सामना कर जीवन को सुंदर कोमल बनाने के पक्षपाती हैं। दिनकर की दृष्टि में काव्य एवं साहित्य की रचना महान उद्देश्य को लेकर होनी चाहिए । आज के कवि का उत्तरदायित्व और भी अधिक है । जब कि देश जाति और समाज को नैतिक दृष्टि से महान बनाना है । आज का मानव अधिक से अधिक कुंठाओं का शिकार हो रहा है । उसे उन्नयनकारी पथ दिखाना कविता का महान उद्देश्य होना चाहिए । दिनकर की सामाजिक चेतना विकासोन्मुख है । वह उच्च मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा करती है ।

---

५८. कुरुक्षेत्र - दिनकर, पृ.१७१ - १७२ ।
५९. वही, पृ. ३३ ।

निष्कर्ष :

दिनकर प्रगतिशील कवि हैं । प्रगतिशील कवियों ने छायावादियों की तरह न वायवी काल्पनिक सृष्टि को आधार माना, न व्यक्ति जीवन की एकांत अंतर्मुखी चेतना में रममाण हुए । उन्होंने यथार्थ को वस्तुगत एवं सामाजिक रूप में ग्रहण किया । दिनकर ने सामाजिक यथार्थ को वैज्ञानिक एवं क्रांतिकारी दृष्टि से ग्रहण किया और वर्गविहीन समाज व्यवस्था की स्थापना के रूप में समाधान खोजा, राजनीति के क्षेत्र में जो मार्क्सवाद है वही साहित्य के क्षेत्र में प्रगतिवाद। इसलिए दिनकर की सामाजिक चेतना वर्गविषमता, वर्णभेद, नारीशोषण, ग्रामीण जीवन की विवशता , आर्थिक शोषण के प्रति सजग है । प्रगतिवाद की सभी विशेषताएँ दिनकर की सामाजिक चेतना में विद्यमान हैं । दिनकर की सामाजिक चेतना सीमित दायरे तक न होकर संपूर्ण जीवन के मंगल मय भविष्य की कामना करती है । उनके भाव जनजीवन से लिए गए हैं । उनकी भाषा भी जन-जीवन के निकट है । उनकी सामाजिक चेतना में जीवन के जितने विविध चित्र निर्मित हुए हैं उतने अन्य साहित्यकारों के नहीं मिलते । दिनकर की सामाजिक चेतना में मार्क्सवादी धारा का अप्रत्यक्ष रूप से सदा ही दर्शन होते हैं । मार्क्सवाद हिंसा साधनों द्वारा क्रांति लाना चाहता है । वह रक्तपात पूर्ण क्रांति का समर्थक है । दिनकर ने भी हिंसा के औचित्य को स्वीकार किया है । वर्ग-संघर्ष तथा आर्थिक विषमता को मिटाने के लिए क्रांति की आवश्यकता है यह दिनकर का स्पष्ट मत है । इसी मत में उनकी प्रगतिवादी सामाजिक चेतना दृष्टिगोचर होती है ।

o